ज्योतिषशास्त्र के योगों का साहित्यशास्त्र में प्रयोग

सुभाष चन्द्र मिश्र

''वेदात् सर्वं प्रसिध्ययति'' षड्वेदांगो में ज्योतिष का अन्यतम स्थान है। वेदों में सूर्य चन्द्रमा तथा दूसरे कतिपय ग्रहों के लिए देवत्व रूप में स्तुतिपरक ऋचाएं उपलब्ध हैं। ब्राह्मण तथा आरण्यक ग्रन्थों में ग्रह-नक्षत्रों के प्रति वैदिक ऋचाओं जैसी रहस्यात्मकता के स्थान पर उनके रंग, रूप, गुण और प्रभाव आदि का विचार किया गया है। ज्योतिषशास्त्र को सर्वप्रथम गणित और फलित के रूप में ही स्वीकार किया गया था, जिसे बाद में स्कन्धत्रय अर्थात् सिद्धान्त, संहिता, होरा के नाम से जाना जाता है[१]।

ज्योतिषशास्त्र का इतिहास ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के साथ शुरू होता है, तथा ब्रह्माण्ड की स्थित पर्यन्त अविछिन्न रूप से गतिमान रहता है। भारतीय विद्याओं की यह मान्यता है कि, ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के मूलभूत कारण भगवान सूर्य हैं। महर्षि व्यास ने स्पष्ट शब्दों में लिखा है, कि नक्षत्र, ग्रह तथा चन्द्रमा का मूल सूर्य में हैं तथा इसकी उत्पत्ति सूर्य से हुई है[२]। भगवान सूर्य ने भी मय को उपदेश देते हुए स्वयं यह बात कही है इन्हीं भगवान सूर्य को वेदों में हिरण्यमय कहा गया है। सर्वप्रथम प्रकट होने के कारण इन्हें आदित्य कहा जाता है तथा सृष्टि की उत्पत्ति करने के कारण इन्हें सूर्य कहा जाता है।[३]।

सृष्टि की उत्पत्ति के आधुनिक सिद्धान्त के अनुसार भी सूर्य के द्वारा ही ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई है। वर्तमान काल में होराशास्त्र को फलित ज्योतिष के नाम से जाना जाता है। इसी फलित ज्योतिष के अन्तर्गत ज्योतिष के विभिन्न प्रकार के योगों का ज्ञान प्राप्त करके उसके द्वारा जातक के जीवन में घटने वाली घटनाओं का शुभाशुभ फल निर्देश किया जाता है।

साहित्य के बहुत से ग्रन्थों में ज्योतिषशास्त्र का बहुतायत में प्रयोग किया गया है। नैषधीयचरित में श्रीहर्ष ने राजा नल तथा दज़्यन्ती के स्वयंवर से लेकर विवाह पर्यन्त अनेक प्रकार से ज्योतिषीय योगों का, मुहुर्त का, शकुनशास्त्र का वर्णन किया है तथा चन्द्रमा से इसकी तुलना की है। नैषधीयचरित में जिस प्रकार से ज्योतिषीय तत्वों का प्रयोग हुआ है वह रचनाकार की ज्योतिष के प्रति आस्था एवं तत्कालीन समय में ज्योतिष के प्रचार-प्रसार तथा उसका मानव जीवन में उपयोग को दर्शाता है। अत: कह सकते हैं कि तत्कालीन परिस्थितियां ज्योतिष के पक्ष में थी तथा इस शास्त्र पर लोगों की आस्था थी।

मुहुर्त शास्त्र के सभी ग्रन्थों में जैसे मुहूर्त चिन्तामणि, मुहूर्तमार्तन्ड आदि ग्रन्थों में विवाहप्रकरण अध्याय के अन्तर्गत ज्योतिषी से विवाह के लिए लग्न का विचार किया गया है। इसके लिए ज्योतिषी को सर्वप्रथम रत्नद्रव्यादि से संतुष्ट करके विवाह का लग्न पूछना चाहिए ऐसी चर्चा भी मिलती है[४]।

यात्रा के समय जल पूर्ण कलश आम्रफल तथा गज का दर्शन शुभ एवं सर्प तथा श्वापद् का दर्शन अशुभ माना जाता है। हंस के कुन्डीनपुर जाते समय सर्वप्रथम जल पूर्णकलश का इस प्रकार दिखाई देना कार्य सिद्धि का प्रतीक माना जाता है। ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्यादित्य (सूर्य के ललाटस्थ) रहने पर ललाटी योग होता है[५] अर्थात् सूर्य जब सामने पड़ता है तो इस योग में यात्रा करना अशुभ होता है। आकाश मार्ग से उड़ते हुए हंस ने राजा के उपवन को देखने की इच्छा व्यज़्त की। रास्ते में देखते हुए उसे वृक्षों के नीचे सर्प, व्याघ्र आदि भयंकर जीव दिखाई दिए। शकुन शास्त्र के अनुसार यात्रा के समय भयंकर खूंखार जानवरों का दिखाई देना अपशकुन का द्योतक है। अत: कह सकते हैं कि हर्ष को किसी शुभ कार्य को करने से पहले शुभ तथा अशुभ का विचार करना अभिप्रेत था।

ज्योतिष शास्त्र के पांच प्रकारों का वर्णन भी मिलता है। यथा–होराशास्त्र, गणितशास्त्र, संहिताशास्त्र, प्रश्नशास्त्र, शकुनशास्त्र। ज्योतिषशास्त्र में शकुन के माध्यम से भी शुभाशुभ विचार करने की पद्धति प्राचीन काल से प्रचलित है। जिसका अप्रतिम प्रयोग श्री हर्ष द्वारा यात्रा के समय किया गया है। जल पूर्णकलश, आम्रफल तथा गज के दर्शन आदि को शुभता के प्रतीक के रूप में नैषधीय चरित ग्रन्थ में वर्णित किया गया है।

ज्योतिषशास्त्र में मनुष्य देवता तथा ब्रह्मा[६] के काल परिमाण से युग का निर्माण होता है। जिसमें एक का क्षणिक समय दूसरे के युग के बराबर माना जाता है। हर्ष का यहाँ पर कथन है कि संयोगियों के क्षण के बराबर वियोगियो का युग ज़्यों नहीं बनाया गया अर्थात् समय जल्दी–2 ज़्यों नहीं बीत जाता, यह काल की गणना को दर्शाता है। ज्योतिष शास्त्र काल की गणना करने का शास्त्र है। श्री वैद्यनाथ ने ज्योतिष शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ जातक पारिजात में ग्रहो के शुभाशुभत्व का वर्णन करते समय शुभ तथा पाप ग्रहों का विवेचन किया है। ज्योतिष के अनुसार पूर्ण चन्द्र को शुभ ग्रह तथा क्षीण चन्द्र को पाप ग्रह माना जाता है। विरह व्यथिता दमयन्ती पूर्णचन्द्र के प्रति क्रोध का भाव दिखाते हुए अपनी सखी से कहती है कि विरही वर्ग के वध से निरत इस सज़्पूर्ण चन्द्र को तुम पाप ग्रह मानों, ज़्यों कि चन्द्रमा का अमृत देवों ने पी लिया, इसीलिए वह काला हो गया, अर्थातअमावस्या का चन्द्रमा का अमृत देवों ने पी लिया, इसीलिए वह काला हो गया, अर्थात अमावस्या का चन्द्रमा बन गया, नहीं तो वह तो निष्पाप ही था। उसके पापत्व का कारण देवता ही है। ज़्योंकि ज्योतिष शास्त्र का नियम है कि, चन्द्रमा का अपना प्रकाश नही होता, वह सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है। उसी तरह नल के कुन्डीन पुर पहुंचने पर होता है। जब सारथी सनाथ के रथ से उतर कर राजा ने नगर में प्रवेश किया। ऐसा प्रतीत होता है जैसे ''भानु मन्डल से निकल कर रश्मिजाल चन्द्रमन्डल में प्रवेश कर रहा हो''।

यात्रा का विचार करते समय यदि चित्रा तथा स्वाती नक्षत्र आये तो यात्रा नहीं करनी चाहिए। ज़्योंकि इस समय की यात्रा अशुभ मानी जाती है अत: यात्रा के समय नक्षत्र विचार अत्यावश्यक है। ऐसा ज्योतिष शास्त्र के मुहुर्त ग्रन्थों में वर्णित है।

वरयात्रा[७]–दमयन्ती के विवाह के समय उनके पिता ने भी विवाह के लिए शुभ मुहुर्त का विचार करवाया था। तथा वरयात्रा के समय दमयन्ती के पिता राजा भीम ने वर का चयन हो जाने

के बाद ज्योतिषी से शुभ समय का विचार करके दमयन्ती के विवाह के उपक्रम को आगे बढ़ाया। ज्योतिष तथा आयुर्वेद दोनों इस बात पर बहुत जोर देते हैं, कि सूर्योदय से पहले जागना चाहिए, परन्तु यदि किसी से देर हो जाए तो सूर्योदय से तुरन्त पहले उठने का विधान है इस बात को लक्ष्य करके, मधुर सु-प्रभात में अर्थात् रात बीतने के उपारान्त वैतालिक लोग नल को जागने के लिए संगीतमय, मधुरपद सुनाने लगे, जिसमें उषा, निशा, चन्द्र, तारे, चक्रवाक्, भ्रमर, कमल, कुमुद, सूर्य आदि का वर्णन उन्होंने अद्भुत् कल्पानाओं के साथ किया है। जिसमें सूर्य का अत्यन्यत हृदयहारी वर्णन किया गया। श्री हर्ष ने नैषधचरित की रचना करते समय अपनी रचना में ज्योतिषीय सिद्धान्तों को पर्याप्त रूप से समावेशित किया है। जो इस बात का द्योतक है कि, श्री हर्ष को ज्योतिशास्त्र की पर्याप्त जानकारी थी या यह ज्योतिष के प्रति उनकी आस्था को दर्शाता है। वृहददैज्ञरन्जना में ग्रहों की दिशाओं का वर्णन किया गया है[८], श्री हर्ष ने भी दिशाओं का वर्णन करते समय बुध को उत्तर दिशा का, सूर्य को पूर्व दिशा का तथा शुक्र को दक्षिण-पूर्व दिशा अर्थात आग्नेय दिशा का स्वामी कहा है।

श्री वैद्यनाथ ने जातकपारिजात नामक ग्रन्थ में ग्रहों के कक्षा क्रम का विवेचन किया है। जिसमें पृथ्वी, के बाद चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, कूज, गुरू, शनि तथा सबसे उपर नक्षत्रकी कक्षा है, जिसमें अधिकांश समय बुध सूर्य के नजदीक होता है। तथा दूसरा सबसे पास का गृह शुक्र है। ग्रहोंमें सूर्य को राजा का प्रतीक माना जाता है। बुध को राजकुमार, एवं शुक्र सबसे चमकता हुआ अलंकारिक ग्रह है। जो सुन्दरता का प्रतीक एवं काम शज़्ति को बढ़ाने वाला है, श्री हर्ष ने प्रस्तुत ग्रन्थ में नल तथा दज़्यन्ती के सामीप्य को ऐसे ही दर्शाने का प्रयत्न किया है, तथा अपने ग्रन्थ में ऐसा ही प्रस्तुत करते हुए लिखा है[९], कि सूर्योदय के समय या जब तक सूर्य पूर्व दिशा की ओर दूर नहीं चला जाता तब तक सूर्य को बुध तथा शुक्र का सामीप्य मिलता है, उसी तरह का दृश्य दर्शन दमयन्ती तथा नल के मिलन से भी होता है, एक तरफ जहां बुध व्यज़्ति को शास्त्र के प्रति उकसाता है, वहीं दूसरी ओर शुक्र काव्य का प्रणेता है, अर्थात् काव्य की ओर प्रवृत करता है। वहीं यहां पर श्री हर्ष ने नल का वर्णन करते समय श्लेष के सहारे ज्योतिष के पूर्व सिद्धान्तों को सुन्दर ढ्ग से व्यज़्त किया है। यथा कान्तिमान कुशल राजा नल, कवि तथा विद्वानों के साथ काव्य एवं शास्त्र का सानन्द अज़्यास करते हुए दिन-प्रतिदिन उसी प्रकार अज़्युदय को प्राप्त हो रहे थे। जैसे बुध और शुक्र से युज़्त भगवान भास्कर प्रतिदिन उत्कर्ष को प्राप्त होते है। बुध तथा सूर्य के योग बहुत ही उत्पात कारक माना है, उसमें धान्य महर्घता[१०] तथा अनाबृष्टि का भय रहता है। तथा ताप की मात्रा बढ़ती है। सूर्य और शुक्र पौरूष युज़्त तथा लावण्य के पूरक ग्रह है। अत कह सकते हैं कि इस प्रकार का योग उद्वेग को बढ़ाने वाला होता हैं। या ऐसा भी कह सकते हैं कि इस प्रकार का योग काम शज़्ति को बढ़ाने वाला होता है[५]। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रयोग श्री हर्ष को श्लेष के लिए अभीष्ट था।

दमयन्ती के अनुरागातिशय का वर्णन करते हुए नल कहते हैं। कि सुन्दरि सन्ध्या वेला में जो दिशा अपने शरीर में अंग राग लगाने की बहुत शौकीन है, उसी के पति वरुण ने तुज़्हारें प्रति अपने चित्र को उस समय भेजा है, जिस मुहुर्त में निकला हुआ पथिक फिर लौटकर नहीं आता

अर्थात् ज्योतिषशास्त्र में कुछ ऐसे मुहुर्तों का वर्णन हुआ है। जिस में घर से निकलना निषिद्ध माना जाता है। इसके माध्यम से कवि ने ज्योतिष में वर्णित अरिष्ट योगों के विचार के द्वारा शुभाशुभ बताने का प्रयत्न किया है। जन्म कुण्डली का निर्माण करते समय ज्योतिषी शुभ स्थिति के शुभाशुभत्व का शुद्धतम विवेचन करने के लिए अष्टक[१२] वर्ग का सहारा लेते हैं। ज्योतिष शास्त्र में यह कथन बहुत प्रसिद्ध है–

अष्टक वर्ग ये शुद्धास्ते शुद्धासर्व कर्मषु।
सूक्ष्माष्टक वर्ग संशुद्धि स्थूला शुद्धिस्तु गोचरे।।

ज्योतिष में अष्टक वर्ग का विचार सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन के लिए किया जाता है। दमयन्तीके अधर पर सुन्दर आठ रेखाओं के प्रति नल उत्प्रेक्षा करते हैं हे प्रिये, तुज्हारे विज़्बारूढ अधर पर मनोज का जो शुभ अष्टक वर्ग लिपिबद्ध किया गया है, बिज़्बारूढ़ अधर पर बना यह भुजपत्र मेरे द्वारा की गई दन्त–छत पंज़्ति के रंगों के कारण है।

मुहुर्त चिन्तामणि ग्रन्थ में विवाह प्रकरण में विवाह के लग्न का विचार करते समय अनेक प्रकार से विचार करने का विधान किया है। जिसमें ग्रह के बल, उनके उदयास्त का भी सटीक विवेचन तथा त्रिबल शुद्धि का भी विचार किया है[१३]।

विवाह मुहुर्त का विचार करते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि, विवाह मुहुर्त सभी प्रकार के ग्रह दोषों से रहित होना चाहिए। महाराजा भीम ने दमयन्ती के विवाह लिए इसी प्रकार के प्रशस्त मुहुर्त का विचार ज्योतिषियों से करवाया था, बाहर जाकर राजा भीम ने ज्योतिषियों की सभा की जिसमें उन लोगों ने राजा, गुरु, शुक्र आदि ग्रहों के दोषों से निर्मुज़्त एवं जामित्र आदि गुणों से संयुज़्त मुहुर्त बताया। उसी मुहुर्त में राजा ने कन्या दान का समय निर्धारित करके कन्या दान का कार्य–क्रम प्रारज़्भ किया।

वराहमिहिर ने अपने अप्रतिम ग्रन्थ बृहज्जातकके चन्द्र योगाध्याय में दुरूधरा[१४] योग का वर्णन किया है। चन्द्रमा के साथ गुरू शुक्र के योग को दुरूधरा योग कहते हैं। एवं यदि चन्द्रमा से दूसरे तथा बारहवें स्थान में सूर्य को छोड्कर अन्य ग्रह हों तो दुरूधरा योग होता है। कल्याण वर्मा ने भी इसकी पुष्टि की है। दुरूधरा योग में उत्पन्न व्यज़्ति अत्यन्त भाग्यशाली होता है, यह एक राज योग है, व्यज़्ति के जीवन में किसी प्रकार अभाव नहीं रहता इस तरह का योग यदि कुण्डली में है, तो उस योग के माध्यम से जातक प्रत्येक इच्छित वस्तु प्राप्त कर सकता है। ज्योतिष के इसी दुर्लभ योग का सहारा लेकर ग्रन्थकार ने दज़्यन्ती में कामोन्माद को बढ़ाने वाले योग को दर्शाने का सुयोग उत्पन्न करने का प्रयत्न किया है[१५]। जिसमें दज़्यन्ती को कुन्डल पहनाती हुई सखी कहती है है सुन्दरी जैसे गुरु और शुक्रके साथ चन्द्रमा के सहयोग से दुरूधरा नामक योग का बनना व्यज़्ति को भाग्यशाली बनाता है। उसी प्रकार यह कुण्डल तुज्हारे मुखमंडल के सज़्पर्क में आने से तुज्हारे प्रिय नल में अतिशय काम को उत्पन्न करते हुए उसे सदा बढ़ाने वाला होगा।

नाट्यकार त्रिवेनी कवि ब्रह्मर्षि महामहोपाध्याय उपाधि से विभूषित सज़्पुर्नानन्द विश्वविद्यालय के कुलपति चर तथा राष्ट्रपति सज़्मान प्राप्त प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने अपनी

रचना ''नाट्यनवरत्नम'' में एकांकी नाटक ''मण्डूक प्रहसनम्'' में भी ज्योतिषीय तत्वों का उल्लेख किया है। यद्यपि वहांछद्म ज्योतिषी का वर्णन किया गया है। फिर भी मेरा कहने का तात्पर्य यह है कि लोगों में ज्योतिष के प्रति लोगों में आस्था का अभाव नहीं था। मण्डूक प्रहसन का कथासूत्र महाकवि छेमेन्द्र प्रणीत वृहतकथा मन्जरी से लिया गया है। इस कथा के एकांकी करण क मूज्य उद्देश्य है मनुष्य के भाग्य एवं देवकृपा का साफ़ल्य प्रकाशन[१६]।

प्रहसन का नायक एक दीन हीन ब्राह्मण है। जो कि अशिक्षित धनहीन तथा हर प्रकार से असहाय है। इतना असहाय कि अपने दूह मुंहे बच्चे के लिए एक गाय तक खरीदने में असमर्थ है। पतिपत्नी तंगहाली को खुशहाली में बदलने के उद्देश्य से धनोपर्जन के लिए कुछ उपक्रम करना चाहते है। इस उपक्रम में यदि कुछ और कार्य न मिले तो उन्हें त्रिक्षाटन से भी परहेज नहीं है परन्तु संयोग वश दैवकृपा से वे राज भवन के पास पहुँच जाते हैं वहां अपने दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदलने के एक ज्योतिषीय पाखण्ड का सहारा लेते हैं। तथा क्षण भर में सभी सुख सुविधाओं से भर पूर हो जातें हैं। एक दुर्बुद्धि इस तरह की सुविधा यदि छद्म भेष बनाकर प्राप्त कर सकता है तो एक सुबुद्धि ज्योतिषी ज़्या करने में सक्षम नहीं है।

१. मुहुर्तचिन्तामणि–प्राज़्कथन
२. नक्षत्रग्रहसोमानां प्रतिष्ठा योनिरेव च।
 चन्द्रऋक्षा ग्रहा सर्वे विज्ञेया सूर्यसंभवा।। सूर्यसिद्धान्त–प्रो. रामचन्द्रपाण्डेय:
३. हिरण्यगर्भो भगवानेवच्छन्दसि पठ्यते।
 आदित्यो ह्यदिभूतत्वात् प्रसूत्या सूर्य उच्चते।। सू. सि., भूगो. १५
४. मुहुर्तचिन्तामणि–विवाह प्रकरण–श्लोक–२
५. वृहद्दैवज्ञरञ्जना से उद्घ्त एवं नारदमत तथा श्रीपति मत के अनुसार
६. युगानां सप्तति सैका मन्वन्तर्मिहोच्यते, कृताब्द्संज्यस्त्स्यान्ते सन्धि: प्रोज़्तो जलप्लव:।
 ससन्ध्यस्ते मनव: कल्पे ग्येयाच्चुर्दश, क्रत प्रमाण: कल्पादौ सन्धिपच्चदश:स्ज़्त:।।
 इत्थंयुगसहस्त्रेण भूतसंहार कारक: ज़्ल्पो ब्रह्ज़्मह: प्रोज़्तम सर्बरी तस्य तावती।।
७. वर यात्रा–नैषधचरित परिशीलन, डॉ. चन्द्रिकाप्राद शुज़्ल पृष्ठ ३९
८. बृहद्दैवज्ञ रञ्ना, पृष्ठ २८६–२८७ एवं अग्निपुराण–२३०/१
९. नैषधीय चरितम १/१७
१०. नैषधीय चरितम २२/८२
११. नैषधीय चरितम १५/४२
१२. अष्टकवर्गाध्याय, बृहज्जातक, वराहमिहिर
१३. मुहुर्त चिन्तामणि, विवाह प्रकरण, श्लोक–४७
१४. हित्वार्क सुनफानफा दुरूधरा:स्वान्त्यो भयस्थै ग्रहै शीतांशो। बृहज्जातक १३/३
१५. आवादिभैमीपरिघाप्य कुन्डले व्य्स्याज़्याज़्भित: समन्वय:।
 त्वादाननैन्दो: प्रियकामजन्मनि श्रयत्ययं दौरूधरी धुरं ध्रुवम।। नैषधीय चरितम

१६. नाट्य नवरत्नम्–एकांकी नाटक, प्रो. राजेन्द्रमिश्रः (उद्धृत–मण्डूक प्रहसनम्–क्षेमेंन्द्र प्रणीत

जब गुरु और शुक्र का अन्तरांश १२° से न्यून हो जाता है, तो गुरू अस्त हो जाता है। और जब शुक्र सूर्य से आगे या पीछे १०° अंश से कम होता है तो शुक्रास्त होता है। गुरु शुक्र के अस्त होने से पहले तेजो हीनता का दर्शन होने से उसका बृद्धत्व होने के बाद भी अल्प तेज होने से बाल्यकाल होता है अतः इसका विचार करना अति आवश्यक है।

सन्दर्भग्रन्थसूची

१. मुहुर्तचिन्तामणि, चौखज़्भा सुरभारती, वारणसी, उ. प्र. तृतीय संस्करण १९८५
२. शुज़्ल चन्डिका प्रसाद, नैषधपरिशीलन हिन्दुस्तान अकाडमी प्रकाशन, इलाहाबाद उ. प्र., प्रथम संस्करण १९६०
३. जातक पारिजात–श्री वैद्यनाथ, चौखज़्भा संस्कृत संस्थान, वराणसी उ. प्र., २००९
४. वृहज्जातक–श्री वराहमिहिरकृत, मोतीलाल बारसीदास, दिल्ली, प्रथम संस्करण, १९८५
५. नाट्यनवरत्नम, प्रो. राजेन्द्रमिश्र, प्रथमसंस्करण २००९
६. पान्डेय, प्रो. रामचन्द्र, सूर्यसिद्धान्त, चौखज़्भा सुरभारती, वराणसी, उ. प्र. २०१०
७. नैषधीयचरित, श्री हर्षविरचित, निर्णयसागर प्रकाशन, बज़्बई, महाराष्ट्र, १९४७